https://www.echetana.com/Vol.-10, No.-02, April-June 2025, pp. 86-88

CHETANA
International Journal of Education (CIJE)

Peer Reviewed/Refereed Journal
ISSN : 2455-8279 (E)/2231-3613 (P)

Impact Factor
SJIF 2025 - 8.445

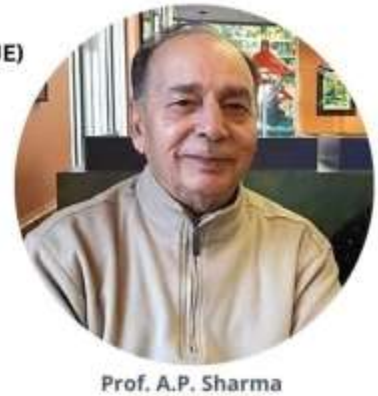

Prof. A.P. Sharma
Founder Editor, CIJE
(25.12.1932 - 09.01.2019)

महुआ माजी के उपन्यास 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' में आँचलिकता

शर्मिला
शोधार्थी
प्रोफ़ेसर राजेन्द्र कुमार सेन
हिंदी विभाग, पंजाब केन्द्रीय विश्वविद्यालय, बठिंडा
Email- shrmilapoonia372@gmail.com, rajinderkumar.sen@gmail.com

First draft received: 20.04.2025, Reviewed: 22.05.2025
Final proof received: 26.05.2025, Accepted: 25.06.2025

सार-संक्षेप

'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' महुआ माजी का आदिवासी अस्मिता पर लिखा गया एक प्रसिद्ध उपन्यास है, जिसमें झारखंड के आदिवासी समाज के जीवन, उनकी परंपराओं, संस्कृति, संघर्ष और समस्याओं का यथार्थ चित्रण किया गया है। यह उपन्यास आँचलिकता की दृष्टि से विशेष महत्व रखता है। इसका कथानक मुख्य रूप से झारखंड के 'मरंग गोड़ा' का अंचल है। लेखिका ने प्रस्तुत उपन्यास मे सिंहभुंग क्षेत्र के सारंडा (सात सौ पहाड़ियों से घिरा जंगल) जंगलों में रहने वाले 'हो' तथा 'संथाल' जनजातियों के जीवन संघर्ष को वाणी दी है। लेखिका ने 'मरंग गोड़ा' के आँचलिक परिवेश लोक संस्कृति, सामाजिक, आर्थिक, राजनितिक तथा भौगोलिक स्थितियों का चित्रण किया है।आँचलिकता इस उपन्यास की प्रमुख विशेषता है, जो पाठकों को आदिवासी समाज की गहराई में ले जाती है और उनकी जड़ों से परिचित कराती है। हिंदी में फणीश्वरनाथ 'रेणु' के 'मैला आँचल' उपन्यास से हिंदी में आंचलिक उपन्यास की परंपरा आरंभ हुई और इसके बाद आंचलिकता को केंद्र में रखकर लिखे जाने वाले उपन्यासों की बाढ़ सी आ गयी। अलग-अलग वैतरणी, पानी के प्राचीर, जल टूटता हुआ, कगार की आग, हौलदार, चिट्ठी रसेन, धरती धन न अपना, दूध गाछ, राग दरबारी, सती मैया का चौरा, झीनी झीनी बीनी चदरिया, जंगल जहाँ शुरू होता है, डूब, अल्मा कबूतरी, हिडिम्ब, पहाड़ चोर आदि के रूप में हिंदी में आंचलिकता की दृष्टि से महत्वपूर्ण उपन्यास देखे जा सकते हैं। इसी क्रम में महुआ माजी का लिखा हुआ 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' एक महत्वपूर्ण उपन्यास है जिसके केंद्र में झारखण्ड का आदिवासी समाज है। प्रस्तुत शोध पत्र में इस उपन्यास के आँचलिक तत्वों का विषद विश्लेषण किया गया है।

मुख्य शब्द : *अंचल, आंचलिक, संस्कृति, लोक-जीवन, लोकगीत, लोक-विश्वास आदि।*

प्रस्तावना

प्रेमचंदोत्तर हिंदी कथा साहित्य और विशेषकर उपन्यास में नवीन धाराओं का आरंभ हुआ। सामाजिक, ऐतिहासिक, प्रतीकात्मक, पौराणिक, मनोवैज्ञानिक और आंचलिक आदि। प्रेमचंद के उपरांत प्रेमचंद के सहृतीय के ग्रामीण परिवेश को आंचलिक प्रवृत्ति के अंतर्गत पुनः अभिव्यक्ति प्राप्त हुई। फणीश्वरनाथ रेणु ने अपने उपन्यास 'मैला आंचल' उपन्यास के माध्यम से बिहार के पूर्णिया के मेरीगंज को जीवंत कर दिया और ग्रामीण परिवेश के इतने सूक्ष्म और सुंदर चित्र प्रस्तुत किए जिससे यह उपन्यास आंचलिक उपन्यास के सिद्धांत को जांचने और परखने का एक मानक बन गया। आंचलिक उपन्यास के केंद्र में अंचल होता है और अंचल में कुछ विशेष तत्त्वों का समवेश होने से उपन्यास का कथानक आंचलिकता प्राप्त करता है। आँचलिकता को समझने के लिए पहले अंचल को समझना आवश्यक है। अंचल संस्कृत भाषा का शब्द है। अंचल के पर्यायवाची शब्द हैं - प्रदेश, जनपद, क्षेत्र, प्रान्त, भूखण्ड, वस्त्र का छोर, साड़ी, ओढ़नी का वह छोर जो छाती और पेट पर रहता है। आँचल यानि देश का प्रान्त, कोना, तट या किनारा आदि।[1] 'अंचल शब्द का एक अर्थ ओढ़नी का छोर अथवा दुपट्टा अर्थ वस्त्र के छोर के रूप में सर्वमान्य स्वीकार्य है, वहीं लगभग सभी शब्द कोशों में स्थान विशेष से जुड़ा प्रांत-भाग वाला अर्थ भी सर्वस्वीकृत रूप में सामने आया है। अंचल का पाश्र्व अथवा सीमावर्ती क्षेत्र से संबंधित जो अर्थ सामने आया है संभवतः वही आंचलिक साहित्य सृजन का आधार बना है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि सामान्यतः सीमावर्ती भू-भाग को ही अधिकांशतः लेखकों ने अंचल की संज्ञा दी है। साहित्य की परिधि में आकर 'अंचल' शब्द केवल अपने भौगोलिक आयाम को ही नहीं प्रकट करता है अपितु "वह एक ऐसे भूखंड विशेष का वाचक बन जाता है जो सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक दृष्टि से अपने आप में इकाई होता है जिसके जीवन की कुछ अपनी विशेषताएँ होती है।"[2] अंचल का लाक्षणिक अर्थ है कोई ग्राम, प्रांत या विशेष भू-खण्ड जिसको किसी उपन्यास की घटनाओं का केन्द्रस्थल मान लिया जाता है। अंचल में 'इक' तद्धित प्रत्यय लगाकर आंचलिक विशेषण शब्द बनता है। आंचलिक का शाब्दिक अर्थ है-अंचल संबंधी[3] अर्थात् अंचल से संबंधित वस्तु-विशेष। इसी प्रकार आंचलिकता भाववाचक संज्ञा है जिसका अर्थ है-"किसी रचना में कथावस्तु आदि का देश के किसी अंचल से संबद्ध होना। अतः कहा जा सकता है कि कोई भी विशेष भू-भाग जिसकी अपनी संस्कृति हो, अपनी भाषा हो, अपनी समस्याएँ हो अर्थात् अपनी विशिष्टता को व्यक्त करे उसे 'अचल' कहा जाता है और उससे जुड़ी वस्तु विशेष आंचलिक कहलाती है और उसके भावमूलक अर्थ को आंचलिकता के रूप में स्पष्ट किया जाता है। हिन्दी उपन्यास समीक्षा में अंचल, आंचलिक और आंचलिकता तीनों शब्द प्रयोग सर्वस्वीकृत तथ्यों के रूप में प्रतिष्ठित हैं। इस संबंध में रामपत यादव का कथन विचारणीय है-"अंचल वास्तव में जनपद या क्षेत्र विशेष का अर्थ देता है, आंचलिक उस जनपदीय या क्षेत्रीय विशिष्टताओं का अर्थ बोध देता है। आंचलिकता शब्द उस विशिष्ट अर्थ बोध की आंचलिक भावाभिव्यक्ति का संकेत करता है।"[4] अतः ऐसी रचना जिसके केंद्र में कोई अंचल और वहां का समग्र जीवन हो उसे आंचलिक रचना कहा जा सकता है।

झारखंड राज्य के जादूगोड़ा नामक स्थान के निकट का क्षेत्र मरंग गोड़ा के नाम से जाना जाता है। 1967 में इस क्षेत्र में जब युरेनियम खनन के लिए अनेक बड़ी-बड़ी कंमनीयाँ प्रवेश करती हैं। जिसके कारण युरेनियम से अयस्क को अलग करने के पश्चात जो अवशिष्ट पदार्थ निकलता है, यहाँ का

1 वृहत हिन्दी कोश, संपादक, कालिका प्रसाद, राजवल्लभ सहाय, मुकुन्दीलाल श्रीवास्तव, पृष्ठ 5

2 महेन्द्र चतुर्वेदी, हिन्दी उपन्यास एक सर्वक्षण, पृष्ठ 189

3 डा. शिवप्रसाद भारद्वाज शास्त्री, मानक विशाल हिन्दी शब्द कोश, पृष्ठ 189

4 रामपत यादव, उपन्यास का आंचलिक वातायन, पृष्ठ 38

आदिवासी समाज उसी के दुश्प्राभाव का शिकार होता है। लेखिका ने युरेनियम विकिरणों से प्रभावित आदिवासी क्षेत्र के जीवन की गहन पीड़ा, उनकी सांस्कृतिक पहचान और उनके संघर्ष को उजागर किया है। उपन्यास का केंद्र बिंदु 'मरंग गोड़ा' नामक स्थान को नीलकंठ का प्रतीक माना गया है, जिसे आदिवासी समाज अपना देवता मानते है। आदिवासी समुदाय के जल, जमीन, जंगल और जीवन पर संकट आ जाता है। खनन की आड़ में जंगल उजड़ते हैं, नदियाँ दूषित होती हैं और लोग अपने पुश्तैनी घरों से बेदखल कर दिए जाते हैं। बेरोजगारी, भूख, बीमारी और सामाजिक विघटन आदिवासियों के जीवन का हिस्सा बन जाता है। इसके साथ ही, उनकी भाषा, संस्कृति, पर्व-त्योहार और धार्मिक विश्वास भी खतरे में पड़ जाते हैं। उपन्यास में आदिवासी समुदाय के शोषण के साथ साथ अन्याय के खिलाफ उनके संघर्ष को लेखिका ने उजागर किया है। वे अपने मरते हुए पहाड़ों और सांस्कृतिक प्रतीकों को बचाने के लिए आवाज उठाते हैं। धरती आम्मा, सरहुल, साखुआ के फूल जैसे तत्व उपन्यास में आदिवासी समाज के प्रकृति और संस्कृति के गहरे रिश्ते को उजागर करते हैं। 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' केवल एक उपन्यास नहीं, बल्कि आदिवासी समाज के अस्तित्व की लड़ाई और उनकी अस्मिता का एक सशक्त दस्तावेज है।

यद्यपि यह उपन्यास आदिवासी जीवन का उपन्यास है परन्तु एक विशिष्ट क्षेत्र पर केन्द्रित होने के कारण और उस अंचल की विशिष्ट संस्कृति की अभियक्ति के चलते इस उपन्यास में आंचलिक उपन्यास के सभी तत्त्व प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं।

उपन्यास में आदिवासी समुदाय की तीन पीढ़ियों का अलग-अलग समय देखने को मिलता है। सगेन उपन्यास का प्रमुख पात्र है। पहला समय सगेन के ततंग यानी दादा जाम्बीरा का है जो युरेनियम खनन से पूर्व का समय है। जिसमें आदिवासियों की सभ्यता, संस्कृति तथा समाज का सजीव परिचय मिलता है। दूसरा समय विकास के पूँजीवादी मॉडल पर युरेनियम खनन शुरू होने के पश्चात का है, जिसकें नुकसान से आदिवासी समाज अनजान है, तथा अपनी आजीविका के लिए फैक्ट्रीयों में काम करने के लिए मजबूर हैं। युरेनियम खनन के कारण हो रहे प्रदूषण, विस्थापन तथा आदिवासियों के सांस्कृतिक विध्वंस की गाथा का उल्लेख मिलता है। तीसरा समय या खंड सगेन का है, जो पढ़ा-लिखा होने के कारण मरंग गोड़ा के आदिवासी समुदाय को उनके अधिकारों के प्रति सचेत करता है। साथ ही सारंडा के जंगलों में रह रहे आदिवासियों पर डाक्यूमेंट्री बनवाने में आदित्यश्री की मदद करता है। जिसमें जादुगोड़ा में हो रहे विकिरण के दुष्प्रभाओं को दर्शाया गया था।

लेखिका ने युरेनियम के बनने की प्रकिया तथा उससे होने वाले नुकसान से भी पाठक को अवगत करवाया है। सगेन अपनी पढ़ाई के साथ-साथ युरेनियम के बारे में अनेक पुस्तकों से भी जान लेता है कि कितना खतरनाक होता है,युरेनियम। दरअसल लेखिका महुआ माजी युरेनियम के खतरों को समझने के लिए हीरोशिमा नागासाकी में हुए परमाणु बम विस्फोट के दुष्प्रभाओं को बताते हुए परमाणु से होने वाले खतरे से सचेत करती है। इस उपन्यास के केंद्र में 'मरंग गोड़ा' अंचल है। सारी कथा का केंद्र मरंग गोड़ा है। उपन्यास का आरम्भ और अंत दोनों मरंग गोड़ा अंचल तक सीमित है। "सारंडा अर्थात सात सौ पहाड़ या की सात सौ पहाड़ियों का जंगल। मैदानी इलाकों से करीब एक हजार आठ सौ फीट ऊँची पहाड़ी पर स्थित अपने ततंग के बड़े भाई के गाँव थोलकोबार कुछेक किलोमीटर आगे हुआ करता था यह दलदल जो ऊपर से सख्त हो चुका था।"[5] इस प्रकार हम देखते हैं कि अंचल की अपनी भौगोलिक और सांस्कृतिक सीमाएं हैं और समग्र कथा इन्ही सीमाओं में घटित होती है।

'मरंग घोड़ा' के आदिवासियों की अपनी एक अलग सामाजिक व संस्कृतिक सरंचना निमित्त है। आदिवासी से अभिप्राय उस जनजाति से है, जो भारतीय संस्कृति व सामाजिक व्यवस्था से दूर जंगलों में निवास करती है और जिसका अपना एक समाज तथा अपनी एक संस्कृति होती है। उनकी प्रकृतिनिस्ट प्राचीन संस्कृति ही उनके अस्तित्व का आधार है।नारायण सिंह इस सबंध में लिखते हैं,"आदिवासियों की संस्कृति और उनके विकास का संबंध निकट का है। आदिवासियों को संगठित करने की शक्ति उनके सांस्कृतिक अभिज्ञान में ही है।" [6] इससे स्पष्ट है कि आदिवासियों की संस्कृति ही उनका आधार है। उपन्यास में महुआ माजी ने मरंग गोड़ा के अंचल विशेष के प्राकृतिक सौंदर्य और उस से लिपटी हुई आदिवासियों की संस्कृति से सबंधित वहाँ के रीती- रिवाजों, धार्मिक मान्यताओं, लोकगीतों,नृत्य,खान-पान,रहन-सहन, रूढ़ियों, पर्व-त्यौहारों एवं परम्पराओं आदि का सूक्ष्म,यथार्थ तथा संवेदनशील चित्रण किया है।

5 महुआ माजी, मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 12
6 महुआ माजी, मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 12

लोक संस्कृति लोकजीवन की धड़कन मानी जाती है क्योंकि आंचलिक उपन्यास लोक जीवन की गाथा को व्यंजित करते हैं इसलिए इनमें लोक संस्कृति की जीवंत झलक मिलना परमावश्यक माना जाता है। लेखक अपनी विशेष शैली में लोक संस्कृति के विभिन्न उपादानों से इस प्रकार अंचल के जीवन का वर्णन करता है कि उस अंचल का सारा परिवेश ही जीवंत हो उठता है। लोक संस्कृति का सफल चित्रण ही सफल आंचलिक उपन्यास का आधार माना जाता है। डा.ह.क. कड़वे के मतानुसार 'आंचलिक उपन्यास में लोगों की रहन-सहन, वेशभूषा, खान-पान, परम्पराओं, त्यौहारों, मनोरंजन के साधनों, विश्वासों, अन्धश्रद्धाओं आदि का चित्रमय शैली में वर्णन प्राप्त होता है। जन जीवन की विभिन्न सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक, नैतिक आदि समस्याओं का उद्घाटन किया जाता है। आंचलिक उपन्यास में अंचल विशेष का सम्पूर्ण सांस्कृतिक जन जीवन मुखर हो उठता है।"[7] किसी भी अंचल की अपनी सांस्कृतिक परम्पराएँ प्रचलित होती हैं,जिस से उस अंचल की विशेष की पहचान होती है। ग्रामीण जीवन में अंधविश्वास एक धारणा बनाकर परंपरा का स्थान ले लेते हैं। शिक्षा का आभाव होने कें कारण सारंडा की भोली -भाली अशिक्षित जनजातियाँ इसी अंधविश्वास की भेंट चढ़ते हैं। उपन्यास के पात्र जम्बीरा की पत्नी की हाथियों के कुचलने से अस्वभाविक मौत हो जाती है। जिसके लिए जम्बीरा का पिता उसे कहता है कि- "जानता नहीं तू दंडि (चुड़ैल) बन गयी है तेरी घरवाली अब? हाथी भूत बनकर हम सबको मर डालेगी यदि अदिंग में स्थापित किया गया तो।"[8] गांव के सभी लोगों में ये भ्रान्ति फैली थी कि अस्वाभाविक मौत मरने से इंसान भूत-प्रेत का रूप धारण कर लेता है। मरंग गोड़ा जो कि यूरिनियम के खदानों से निकलने वाली रेडियोधर्मी विकिरणों के प्रभाव से पूरी तरह ग्रस्त है, जिसके कारण वहाँ के जीव-जंतुओ के साथ- साथ आम जन भी अनेक बीमारियों के शिकार बने। किन्तु अंधविश्वास और अशिक्षा के कारण मरंग गोड़ा के आदिवासियों को इन बीमारियों के पीछे भूत-प्रेत का साया नजर आता है। सगेन की माँ सकेन को इन बढ़ती बीमारियों का कारण उसकी ताई को मानती है और कहती है- "मतलब मरंग गोड़ा में हो रही तमाम अजीबोगरीब बीमारियों की जड़ में कहीं न कहीं डायनों का ही हाथ है। और,उन डायनों की सरगना है तुम्हारी ताई।"[9] सगेन पढ़ा-लिखा होने के कारण विकिरणों से पड़ने वाले प्रभाव के बारे में जानता था। उसका मानना था की इन अनपढ़ भोले-भाले गाँववालों को कैसे समझाए कि उनकी भयंकर बीमारियों के पीछे का कारण कोई भूत-प्रेत नहीं है, बल्कि स्थानीय क्षेत्र मरंग गोड़ा में हो रहे यूरिनियम खनन के विकिरण है, जिसके कारण किसी का शरीर सिर की तुलना में काफी बड़ा, किसी का शरीर सिर की तुलना में काफी छोटा, नवजात शिशुओं की मौत, बाँजपन जैसी अनेक समस्याओं का होना आम बात थी।

प्रस्तुत उपन्यास में महुआ माजी ने मरंग गोड़ा के आदिवासी अंचल के रीती - रिवाजों और परम्परागत प्रथाओ को बड़ी आस्था के साथ प्रस्तुत किया है। लेखिका आदिवासियों में होने वाली विवाह की अनेक रस्मों से अवगत करवाती है। इस समुदाय में शादी करने वाले लडके को कुछ धन राशि शादी से पहले लड़की के पिता को देनी होती है, उस के पश्चात ही शादी होना तय होती है। इस धन राशि को गोनोंग कहा जाता है।ये गोनोंग लेने लड़की के घर वाले जाम्बीरा के घर आते हैं, घर की महिलाओं द्वारा पैर धुलाकर उनको ससम्मान बैठाया जाता है- "फिर डियंग, पिका,मीट भात से स्वागत करने के बाद दोनों पक्षों के मर्दो की उपस्तिथि में तय गोनोंग का लेन-देन हुआ। नगद गेल टका (दस रुपए), एक जोड़ा बैल, पाँच गाय, गेल मोय: (पंद्रह)बकरी, गेल (दस) मुर्गी दिया गया लड़की वालों को।"[10] लेखिका ने सारंडा के जंगलों में रहने वाले आदिवासी समाज कें परम्परागत संस्कारो से अवगत करवाया है। जिसमें एक एकसिया संस्कार है। यह बच्चा होने की खुशी में किया जाता है।उपन्यास के पात्र जाम्बीरा जिसकी आर्थिक स्तिथि ठीक नही होने पर भी उसको एकसिया संस्कार के लिए अनेक तैयारी करनी थी।"एकसिया के दिन माँ और बच्चे के लिए नया कपड़ा पहनाना पड़ेगा उसे। हाथों में ताँबे का सकोम, काले धागे में गुंथकर कमर में बांधनेके लिए कौड़ी, घुंघरु, चूड़ी, सांप की हड्डी,......कितनी कितनी तैयारी।"[11] इसी एकसिया के दिन बच्चे को उसके परिवार व समाज में सदस्य के रूप में मान्यता मिलती है। बच्चे की सलामती के लिए देसाउली से तथा अपने पुरखों से प्रार्थना करते हैं। "इसके के लिए सिंहबोंगा को,पहुवी, जायरा, गोंवाबोगा को, पुरखों और ग्रामदेवता देसाउली को डियंग,उड़द,चावल आदि से पूजा जाएगा।"[12] बच्चे को आशीर्वाद देने के लिए बकरे की बलि दी जाती है, तथा नामकरण किया

7 डा.ह.क.कड़वे, हिन्दी उपन्यासों में आंचलिकता की प्रवृत्ति, पृष्ठ 27
8 महुआ माजी, मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 51
9 महुआ माजी, मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 124
10 महुआ माजी, मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 33
11 महुआ माजी, मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 41
12 महुआ माजी, मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 152

जाता है। पेटभर खाना खाने का इंतजाम नहीं कर सकने वाले व्यक्ति के लिए समाज के ये रीती- रीवाज कमर तोड़ देने वाली होती हैं।

लेखिका ने उपनक माध्यम से आदिवासी समुदाय में प्रचलित कथाओं से अवगत करवाया है, जो उनके लिए जीवन शैली का आधार हैं। भारतीय समाज से अलग रह रहे इस समुदाय के लिए लोक कथा एक अनिवार्य पहलू है। जिसका अनुसरण ये पीढ़ी दर पीढ़ी करते आये हैं। उपन्यास में चरिबा का ततंग (दादा) सगेन से कहता है-"हमारे बुजुर्ग कहा करते थे, मरने से पहले हम से सुनी हुई तमाम कथाओं को नयी पीढ़ी को सुनकर जाना। वरना तेरे साथ साथ ये कथाएं भी मर जाएंगी और एक दिन ऐसा आएगा जब उनके पास हमारा दिया कुछ भी नहीं बचेगा। कुछ भी नहीं....सृष्टि का विकासवादी सिद्धांत हमारी लोककथाओं में भी।"[13] मरंग गोड़ा के आदिवासी अपने पूर्वजों से सुनी लोक देवी-देवताओं की कथाओं को सर्वोपरि मानते हैं। वहाँ के आदिवासी पेट पालने के लिए लोहा निकालने वाली खदानों में मजबूरी के चलते मजदूरी तो करते हैं, किन्तु उनका मानना है कि उनके देवता सिंगबोंगा (सूर्य देवता) यह कार्य करने कि अनुमति नही देता। क्योंकी प्रकृति से छेड़छाड़ करना सिंगबोगा को बिलकुल स्वीकार नहीं। सगेन कहता है - ततंग (दादा)की हिलि (भाभी) को इस बात का बड़ा अफसोस था। एक बार बोली.. जो काम हमारे सिंहबोंगा को, हमारे पूर्वजों को, हमारे पुरखों को बिलकुल पसंद नहीं था आज पेट भरने के लिए हमें वही करना पड़ रहा है।"[14] आदिवासी समाज के लिए जल, जमीन और जंगल उनका अस्तित्व है, प्रकृति उनकी जीवन रेखा। मरंग गोड़ा के जंगलों को काटकर वहाँ की धरती पर यूरिनियम अयस्क के खनन से निकलने वाली विकिरणों की त्रासदी को आदिवासी झेलते हैं।

आदिवासी समाज अपने मनोरंजन के लिए अपने पर्व बड़ी धूमधाम से मनाते रहे हैं। 'बा पोरोब' मरंग गोड़ा में मनाया जाने वाला यह तीन दिन का त्यौहार। जिसमें प्रकृति की पूजा की जाती है, सिंहबोंगा यानी सूर्यदेवता और धरती मां का विवाह किया जाता है। लेखिका महुआ माजी आदिवासियों की समस्याओं से अवगत तो करवाती ही है, साथ ही वो उनके समाधानों की ओर भी संकेत करती है। उपन्यास के पात्र सगेन के द्वारा यह बताने की कोशिश की जाती है कि मानव जीवन पर युरेनियम का क्या दुष्प्रभाव पड़ता है।

आंचलिक उपन्यासों में लोक गीत का विशेष महत्त्व होता है। लोक गीत मानव हृदय की स्वछंद अनुभूति है। लोकगीतों की परम्परा मानव जीवन के समान ही अत्यंत पुरानी है । प्रत्येक समाज और भाषा के लोगों के अपने लोक गीत होते हैं। संसार की कोई ऐसी भाषा नहीं है जिसमें लोक गीत न हो । आदिवासी समाज भी इससे अछूता नहीं है, उनकी भी अपनी विशिष्ट लोक गीत परम्परा है, जो आदिवासी संस्कृति का मुख्य अंग है। आदिवासी समाज जीवन के प्रत्येक रंग का लोक गीतों के माध्यम से आनंद लेता है।

हुड़ि होनमे नेरा

नेमालेमे,

मालची रेहोले मालची मीसाईहा,

बुलुं रेहोले बुलु मिसाई,

पाकड़ मान्डीले चाहकातीहा

बड़ी बहन के नाम से जो डियंग बना है, उसे तो हम लोगों को दे दें। साथ ही आपके उपजाऊ खेत के चावल से जो डियंग बना है, उसे भी हम लोगों को दे दें। अगर आप लोग उन दोनों प्रकार के डियंग को नहीं दे सकते हैं तो वधू की छोटी बहन को ही दे दीजिए, जिसे ले जाकर हम लोग नमक मिर्चा लगाकर चखेंगे।[15]

आदिवासी समुदाय के पास पूर्वजों की विरासत के रुप में जंगल ही होते हैं, यदि उन जंगलों को औधोगीकरण के भेंट चढ़ा दिया जायेगा तो वे अपनी संस्कृति और भाषा से अलग हो जायेगें। वे कहते हैं-जंगल में ही नाच गाकर, खेल कूदकर, शिकार करके हमारे बच्चे बड़े होते हैं। जंगल आते जाते ही वे अपने बड़ो से संस्कृति, अपनी परम्पराओं, रीती रिवाजों और संस्कारो के बारे में जानते हैं।हमारा पूजा स्थल सरना, हमारी मिलन स्थली, हमारे नाच गान और मनोरंजन की जगह...मृत पुरखों की निशानी इन जंगलों के बिच ही तो है। जंगल हमारा भगवान है। हमारा बिर बोंगा...बुरु बोंगा....इनके साथ किसी प्रकार की छेड़ छाड़ हम बर्दाश्त नहीं करेंगे। और न ही इससे वंचित होकर जीना चाहेंगे।[16] महुआ माजी आदिवासियों के इसी पारम्परिक अधिकार की बात करती है। जंगलों को नष्टकर हम अत्याधुनिकता की दौड़ में आदिवासियों की संस्कृति को मृत बना रहे हैं।

आंचलिक उपन्यासों के पात्र भी स्थानीय होते हैं अर्थात् वे पात्र उस अंचल के जीवन के अनुरूप तथा वहां की परिस्थितियों को व्यक्त करने में सक्षम होते हैं। आंचलिक उपन्यास सामान्यतः व्यक्तिपरक न होकर प्रतिनिधि पात्र होते हैं जो आंचलिक जीवन के विविध पहलुओं का प्रतिनिधित्व करते है। इस संबंध में डा.नगीना जैन का मानना है-''आंचलिक उपन्यास के पात्र के चित्रण की प्रणाली व्यक्तिपरक न होकर वर्गपरक या जातिपरक होती है। पात्र अपना प्रतिनिधि नहीं होता, वह वर्ग या जाति के संस्कारों का प्रतिनिधित्व करता है; अतः उसकी निश्चित क्रिया-प्रतिक्रिया होती है, तथा वह एक निश्चित दायित्व का वहन करता है। वह सामान्य चरित्र में जीता है। अंचल के जन-जीवन के विभिन्न पहलुओं का प्रतिनिधित्व करता हुआ यह पात्र उपन्यास का 'अनुसन्धानिक माध्यम' होता है।'[17] प्रस्तुत उपन्यास के पात्र सगेन, जाम्बिरा, मेंजारी, रेकोंडा, चारिबा आदि सभी आंचलिक पात्र हैं, इनकी भाषा, शब्द और व्यवहार सभी आंचलिक हैं।

आंचलिक उपन्यास की समस्याएं भी आंचलिक और विशिष्ट होती हैं। युरेनियम खनन के पश्चात उसे निकलने वाले कचरे को मरंग गोड़ा की नदियों, नालों तथा स्थानीय तलाबों में फेंक दिया जाता है, जिससे वहाँ के लोगों को अनेक बीमारियों से जूझना पड़ता है। उसी पानी को पीते, नहाते, और खेतों में फ़सल उगाते हैं। मछली से ये अपना पेट भरते और उनको बेचते। मछली बेचना इनका आर्थिक रूप ठीक करता। जब पत्रकार एक मछूआरे को मिला तो उसने बताया:-पहले कितनी मछली हुआ करती थी थी इधर!जमशेदपुर के बाजार में बेचकर भी पैसे कमाए मैंने।आज तो घर वाले भी यहां की मछली नहीं खाते।...क्योंकी जहरीली हो गयी है यहां की मछलीयां। खाने से पेट में ऐठन होती है। जी मचलता है।[18]

इस प्रकार कहा जा सकता है कि विवेच्य उपन्यास झारखण्ड के मरंग गोड़ा के जीवन का एक जीवंत दस्तावेज है। इस उपन्यास के माध्यम से जहाँ एक ओर इस अंचल के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन की झलक उभरती है वहीं दूसरी ओर इस अंचल की स्थानीयता की रंगत इस उपन्यास में देखने को मिलती है। इस उपन्यास के पात्र सामान्य पात्र न होकर अंचल विशेष के पात्र हैं जिनकी भाषा, शैली और मुहावरा स्थानीयता का बोध करवाता है। इस उपन्यास में वर्णित समस्या भी इस अंचल की एक विशिष्ट समस्या है और सबसे बड़ी बात यह है कि इस उपन्यास का कोई नायक नहीं बल्कि 'मरंग गोड़ा' का मानवीकरण होने के कारण स्वयं नायकत्व को समाहित किये हुए है। अतः यह एक समस्याप्रधान आदिवासी उपन्यास होने के साथ-साथ एक सफल आंचलिक उपन्यास भी है।

13 महुआ माजी, मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 146
14 महुआ माजी, मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 129
15 महुआ माजी, मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 36
16 महुआ माजी, मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 114
17 डा कु. नगीना जैन, आंचलिकता और हिन्दी उपन्यास, पृष्ठ 41
18 महुआ माजी, मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 182